जनांदोलनों और राजनैतिक दलों की ऊर्जा जोड़ने की जरूरत

योगेंद्र यादव

जैसे ही संयुक्त किसान मोर्चा की समन्वय समिति से मेरे इस्तीफे की खबर चलनी शुरु हुई, कई शुभचिंतकों के फोन शुरु हो गए: "क्या हुआ? कोई मनमुटाव हो गया क्या? मोर्चे में फूट पड़ गई क्या?" मैंने कहा बिल्कुल नहीं। मैंने स्वेच्छा से समन्वय समिति से हटने का प्रस्ताव रखा था जिसे 4 सितंबर की मीटिंग में पेश किया गया। मेरी जगह "जय किसान आंदोलन" के अध्यक्ष अवीक साहा समिति का काम करने के लिए उपलब्ध रहेंगे। मेरा संगठन "जय किसान आंदोलन" बाकायदा संयुक्त किसान मोर्चा का एक घटक संगठन है। मोर्चे के किसी भी फैसले को लागू करने के लिए एक सिपाही की तरह मैं हमेशा उपलब्ध रहूंगा।

दूसरे तरह के फोन भी थे: "अगर मोर्चे के साथ जुड़े हो तो समन्वय समिति छोड़ने की क्या जरूरत थी? सुना है आप भी राजनीति करना चाह रहे हैं?" किसी ने मीडिया पर मेरे कांग्रेस में शामिल होने की अफवाह भी चला दी। इन दोस्तों को भी मेरा जवाब सीधा था: राजनीति में मैं आज नहीं, कम से कम 10 वर्ष से हूं। मैंने तो हमेशा कहा है कि शुभ को सच में बदलने का नाम राजनीति है। इसलिए राजनीति हमारा युग धर्म है। अगर देश सुधारना है, लोकतंत्र बचाना है, तो राजनीति करनी होगी। मुझे स्वराज इंडिया नामक राजनैतिक दल का संस्थापक सदस्य बनने का सौभाग्य मिला है और आज भी अपने राजनैतिक घर में ही हूं। कांग्रेस द्वारा आयोजित "भारत जोड़ो यात्रा" को समर्थन देने का फैसला मेरा व्यक्तिगत फैसला नहीं है। यह मेरी पार्टी के सभी साथियों का सामूहिक फैसला है।

यहां मेरे इस्तीफे से जुड़ी इन दोनों प्रतिक्रियाओं का जिक्र करने का उद्देश्य अपने से जुड़े एक फैसले पर रोशनी डालना नहीं है। यह छोटा सा उदाहरण हमारे सार्वजनिक जीवन की एक बड़ी विसंगति की तरफ इशारा करता है। आज हमारे देश में लोकतांत्रिक राजनीति की ऊर्जा दो हिस्सों में बंटी हुई है। एक तरफ राजनीतिक दल हैं जो सिर्फ चुनाव लड़ने की मशीन बन गए हैं। आमतौर पर राजनीतिक दलों का औसत कार्यकर्ता या तो सत्ता का सुख भोगता है या फिर सत्ता में आने का इंतजार और प्रयास करता है। चूंकि इन दोनों का फैसला चुनाव में होता है इसलिए पार्टी का सारा ध्यान और ऊर्जा चुनाव पर ही केंद्रित रहता है। पहले कहा जाता था कि राजनीतिक पार्टी बनाने का मतलब है: कार्यकर्ता, कार्यक्रम, कार्यालय और कोष। जैसे-जैसे राजनीतिक दल खोखले हुए हैं वैसे वैसे राजनीति के यह चारों ककहरे गायब हो गए हैं। आज राजनैतिक दलों के पास विशाल जन समर्थन है, पैसे और मीडिया का बड़ा तंत्र

है, नेताओं का बड़ा दरबार है, लेकिन न तो विचार हैं और न ही उन विचारों को लागू करवा सकने का संगठन।

दूसरी तरफ जन आंदोलन हैं जिनके पास ऊर्जा है, विचार हैं, प्रतिरोध की क्षमता है, लेकिन वे आज की लोकतांत्रिक राजनीति में असर नहीं डाल सकते। हाल ही में देश में किसान आंदोलन की ताकत का एक नमूना देखा है। लेकिन देश में तमाम ऐसे दूसरे आंदोलन भी हैं जो ऐसी ही ताकत रखते हैं, हालांकि अपनी सारी ताकत को बटोर कर दिल्ली में मोर्चा खड़ा करने में असमर्थ है। इसमें संगठित और असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के आंदोलन, बेरोजगार नवयुवकों के आंदोलन महिला सशक्तिकरण की मुहिम दलित आदिवासी और अन्य पिछड़े वर्ग के आंदोलन या फिर शराबबंदी जैसे मुद्दों को लेकर चले आंदोलन शामिल हैं देश में शायद ही कोई कोना होगा जहां इनमें से कोई ना कोई आंदोलन जमीन पर लोगों को न जोड़ रहा हो। यह आंदोलन चुनाव से दूर रहते हैं, लेकिन अराजनैतिक नहीं है। इनकी विचारधारा, देश और दुनिया के सवालों पर इनका रुख और सत्ता का प्रतिरोध करने की इनकी क्षमता इन आंदोलनों को गहरे रूप से राजनैतिक बनाती है। लेकिन इन जमीनी आंदोलनों का चरित्र ही ऐसा है कि वह एक छोटे इलाके या एक छोटे वर्ग में सघन रूप से उभरते हैं। इसलिए जब वोट की राजनीति का सवाल उठता है तब इन आंदोलनों का सीधा असर सत्ता के चुनावी खेल में प्रभावी नहीं होता।

देश की राजनीति में यह दोफांक कोई नई बात नहीं है। अस्सी के दशक से ही भारतीय राजनीति के विद्वानों ने गैर दलीय राजनीति की प्रवृत्ति को चिन्हित करना शुरू किया था प्रो रजनी कोठारी सरीखे विद्वानों की मान्यता थी की इतिहास के इस दौर में सामाजिक परिवर्तन के लिए दलीय राजनीति की बजाय गैर दलीय राजनीति ज्यादा प्रासंगिक थी। लेकिन आज वह परिस्थिति उलट गई है आज चुनौती लोकतांत्रिक राजनीति के भीतर गैर दलीय राजनीति की स्वायत्तता को बचाने की नहीं है। आज चुनौती लोकतांत्रिक राजनीति को बचाने की है। ऐसे में हमारी चुनौती संसदीय विपक्ष और सड़क के विरोध का सामंजस्य कर एक सच्चा प्रतिपक्ष खड़ा करने की है।

आज हमारा देश एक अभूतपूर्व संकट के दौर से गुजर रहा है। देश के प्रमुख कार्यकर्ताओं और बुद्धिजीवियों ने एक बयान में इस खतरे को रेखांकित किया है "आज संवैधानिक मूल्यों और लोकतांत्रिक मानदंडों को बेशर्मी से नष्ट किया जा रहा है... आज भारत का स्वधर्म एक सुनियोजित हमले का सामना कर है। .. इससे पहले कभी हमारे गणतंत्र के सभी मूल्यों पर एक साथ इतना जघन्य हमला नहीं हुआ। इससे पहले कभी भी हम पर इतनी बेहयाई से नफरत, बंटवारे और भेदभाव को नहीं थोपा गया था। इससे पहले कभी भी हमें इस हद तक जासूसी, प्रोपेगेंडा और मिथ्यातंत्र का शिकार

नहीं होना पड़ा था। इससे पहले कभी हमने लोगों की दुर्दशा के प्रति इतना निष्ठुर शासन नहीं देखा, जहां चौपट अर्थव्यवस्था को चंद थैलीशाहों के सहारे चलाया जा रहा है।" आज हमें एक ऐसे साधन की जरूरत है जो इस राष्ट्रीय संकट का मुकाबला कर सके।

देश में प्रतिरोध की क्षमता खत्म नहीं हुई है। पिछले कुछ वर्षों में हमने आजाद भारत में लोकतांत्रिक प्रतिरोध के कुछ सबसे शानदार लम्हों को भी देखा है। किसान आंदोलन इसकी जीती जागती मिसाल था। उसके अलावा भी लाखों लोग समान नागरिकता की मांग को लेकर सड़कों पर उतर आए। अनेकों कार्यकर्ताओं, पत्रकारों, वकीलों, लेखकों और आम नागरिकों ने धमकियों की परवाह नहीं की, जेल जाना मंजूर किया और सत्ता के सामने सच बोलने की खातिर सब कुछ दांव पर लगा दिया।

आज जन उभार की इस ताकत को उन राजनीतिक दलों से जोड़ने की जरूरत है जो हमारे संवैधानिक लोकतंत्र की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध हैं। इसलिए मैं किसान आंदोलन के साथ-साथ अन्य आंदोलनों से भी संपर्क में हूं। अपनी पार्टी "स्वराज इंडिया" के साथ साथ अन्य विपक्षी राजनीतिक दलों के साथ समन्वय की कोशिश में लगा हूं। इसीलिए मैंने संयुक्त किसान मोर्चा की जिम्मेवारी से मुक्त होने का अनुरोध किया था। लेकिन यह मिशन किसी एक व्यक्ति से हासिल नहीं हो सकता। जैसे देश को आजाद करवाने के लिए हजारों दीवाने घर बार छोड़कर निकले थे, उसी तरह देश की दूसरी आजादी के लिए भी हजारों "आंदोलनजीवियों" को इस चुनौती को अपने जीवन का मिशन बनाना होगा।